आधुनिक हिन्दी गद्य और गद्यकार

आधुनिक हिन्दी

गद्य और गद्यकार

डॉ० जेकब पी० जाज



ग्रन्थम
रामबाग-कानपुर

प्रकाशक ग्रन्थम रामबाग कानपुर-१२
लेखक डा० जेकब पी० जाज
प्रकाशन काल अप्रैल, १९६६
आवरणमुद्रक मनोहर प्रिंटिंग प्रेस, कानपुर
मुद्रक मानक प्रिण्टर्स आनन्दबाग कानपुर-१

मू० पन्द्रह रुपये

पूज्य गुरुदेव,

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी
उपकुलपति विक्रम विश्वविद्यालय
को
सादर समर्पित

आमुख

अभिव्यक्ति-मात्र के क्षेत्र में विभिन्न भावों अनुभूतियों एवं विचार-धाराओं के यथातथ्य तथा प्रभावोत्पादक प्रेषण की प्रत्येक भाषा की क्षमता का अध्ययन और तुलना, विकास के पथ पर अग्रसर प्रत्येक भाषा के लिए लाभकारक है। मानव-मात्र की अभिव्यक्ति की भाषा की क्षमता-अक्षमता, शक्ति-अशक्ति का अध्ययन अभिव्यक्ति-मात्र के क्षेत्र में भाषा की अभिव्यक्ति की बारीकियों से अभिमण्डित करने के लिए आवश्यक तो है, भाषा के ऊपर अधिकार पाने का वह एक मात्र साधन भी है। परन्तु इतना अवश्य मानना ही पड़ेगा कि अध्ययन का यह कार्य कम उलझन-भरा नहीं है।

श्रद्धेय आचार्य वाजपेयी जी के निर्देशानुसार शैली के अध्ययन में जब मैं संलग्न हुआ तो मुझे लगा कि शैली शब्द ही अपने आप में अत्यन्त सरल और अनिश्चित अर्थवाला है। गत दो वर्षों के अध्ययन और मनन के उपरांत मैं इस निर्णय पर आ पहुंचा हूं कि शैली के निर्माण में अनेक तत्व संलग्न हैं शैली और व्यक्ति-तत्व, शैली और वस्तु-तत्व तथा शैली निरपेक्ष रूप से, इस प्रकार विभिन्न दृष्टियों से शैली का अध्ययन किया जा सकता है। परन्तु, इनमें से केवल एक तत्व-मात्र को प्रधानता देकर दूसरे की अपेक्षा करके इस क्षेत्र में अग्रसर होने से अक्सर भ्रांति उत्पन्न हो जाती है। हां शैली के क्षेत्र में व्यक्तित्व की उपेक्षा कदापि संभव नहीं है। परन्तु इसके साथ-ही-साथ यह भी ध्यान में रखना नितांत आवश्यक है कि शैली के क्षेत्र में व्यक्तित्व भी अपने आप में स्वतन्त्र नहीं है, व्यक्तित्व की अबाध अभिव्यक्ति-मात्र को शैली मानना भ्रम फैलाना मात्र होगा। हमें यह मानने में कोई आगा-पीछा नहीं करना चाहिए कि व्यक्तित्व की विषयानुगत अभिव्यक्ति ही शैली पद का अधिकारी है। हाँ, विषय को चुनने में व्यक्तित्व स्वतन्त्र अवश्य है परन्तु एक बार चुनाव सम्पन्न होने के पश्चात् व्यक्तित्व को भी विषय का बन्धन अवश्य स्वीकार करना पड़ेगा, ऐसा न हो कि यह बन्धन एक-तरफा रहे। अपने सच्चे अर्थ में विषय और व्यक्तित्व के इस सामंजस्य से ही शैली प्रादुर्भूत होती है।

इस प्रकार कतिपय विद्वान शली को विषय–वस्तु से नितात असबद्ध एक ऊपरी वस्तु समझ बठत है ऐसे लोग अपनी इस धुन म यह भी भूल जाते हैं कि शली अपन आप म साहित्य का चरम साध्य–स्वरूप नहीं है वह केवल साधन मात्र है वक्तव्य की यथातथ्य तथा प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति मे माध्यम–स्वरूप बनकर आने म ही उसकी सायकता है । एस आलोचक शली को कवल बाहरी तडक भडक मात्र मानते हैं। यह दृष्टिकोण भी नितात भ्रमजनक और ऊपरी मात्र है इतना अवश्य है कि शली कवल सफल तथा वशिष्ट्य युक्त अभिव्यक्ति का सहज धम है न कि प्रत्यक अभिव्यक्ति का साधारण धम । शली–सम्ब धी उपयुक्त सभी मूलभूत मान्यताओं क आधार पर आग बढन का मैंने यहा प्रयास किया है ।

इस प्रब ध म सात अध्याय हैं । विषय–प्रवेश क प्रथम अध्याय मे मैंन विषय का आशय और उसकी साथकता गद्य–शली स हमारा प्रयोजन गद्य और गद्य–शली का अन्तर आदि पर विचार किया है । शली क अध्ययन की सबस बडी उपयोगिता मुझ यह लगी कि वह भाषा क ऊपर विजय पाने का सहज साधन है विकासोन्मुख प्रत्येक भाषा की उचित माग पर प्रगति के लिए भी यह अध्ययन अनिवाय है ।

इसक उपरात शली के सद्धातिक अनुशीलन का द्वितीय अध्याय आया है । यहा मने शली शब्द शैली और रीति शैली क अथ शैली क उपकरण शैली क प्रमुख–तत्व गद्य शली की विशेषतायें आदि पर विचार किया है । भारतीय रीति विवेचन तथा पाश्चात्य शैली–विवेचन क अध्ययन क उपरात मुझ ऐसा ही लगा कि इन दोनों मे कोई मूलभूत अन्तर नहीं है । शैली क अथ के सम्बन्ध म उसके तीन पहलुओं पर ही–शैली और व्यक्ति–तत्व, शैली और अभिव्यक्ति तत्व शैली निरपेक्ष तत्व क रूप में विचार करना मुझ यथेष्ट लगा है । शैली क बाह्य तत्वों के अन्तगत ध्वनि शब्द, वाक्य अनुच्छेद, प्रकरण अलकार आदि की विवेचना की गई है जिनके सुविचारित, विषयानुकूल प्रभविष्ण तथा चमत्कारयुक्त प्रयाग स शैली प्रादुर्भूत होती है । ये सब लेखक क व्यक्तित्व पर निभर हैं जो शैली का प्रमुख तत्व है जिस बौद्धिक भावात्मक एव सौंदर्यात्मक इन तीन कोटियों मे विभक्त किया गया है । गद्य–शैलियों की विशेषताओं के प्रसग म मैंन यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि अभिव्यक्ति–मात्र की मूलभूत समस्या क रूप मे गद्य और पद्य में शैली की दृष्टि

से कोई अंतर न होते हुए भी इन दोनों का क्षेत्र आभ्यंतर और बाह्य दोनों– भिन्न भिन्न हैं । अब, शैलियों के वर्गीकरण के विषय में व्यक्तित्व तथा विषय वस्तु दोनों के सामंजस्य के ऊपर बल देते हुए अपने विषय की सुविधा को दृष्टि में रखते हुए मैंने बीसवीं शताब्दी हिंदी गद्य की चार प्रमुख शैलियां मानी हैं सार्वजनिक शैली जो पत्रकारिता के लोकोन्मुख गद्य में अक्सर देखने को मिलती है, विवेचनात्मक शैली जो विचारात्मक गद्य विचारात्मक निबंध और इसी कोटि के आलोचनात्मक प्रयासों में प्रमुख रूप से प्रस्फुटित होती है विवरणात्मक शैली जिसके अध्ययन के लिये कथात्मक गद्य उपयोगी समझा गया है, और तरल शैली जिसके अलंकृत और भावात्मक दो रूप हो सकते हैं तरल शैली का संबंध मैंने अभिव्यक्ति–विशेष से न जोड़कर अभिव्यक्ति-मात्र के अलंकृत और काव्यात्मक तत्वों से जिन्हें चाहे तो विदग्ध साहित्य कहा जा सकता है–जोड़ा है ।

आगे के चार अध्यायों में उपर्युक्त चार शैलियों का विकासात्मक अध्ययन है । यहां प्रत्येक अध्याय में मैंने शैली–विशेष को विषय विशेष के साथ जोड़कर उसी की पृष्ठभूमि में शैली का स्वरूप हिंदी में उसका विकास बीसवीं शताब्दी में उसके प्रमुख उन्नायक अक्सर प्रमुख लेखकों से केवल चार ही मैंने सुविधा की दृष्टि में रखते हुए चुना है ।

यह एक बात विशेष उल्लेखनीय है । यद्यपि मैंने प्रत्येक शैली को किसी न किसी एक अभिव्यक्ति–विधा से ही जोड़ा है, इसका मतलब यह नहीं कि अन्य साहित्य रूपों में इसका कोई स्थान ही नहीं है । यहां भी मेरी दृष्टि अध्ययन की प्रत्यक्ष सुविधा की ओर रही है ।

दैनिक पत्रों के अग्रलेख तथा साप्ताहिक पत्रों की सम्पादकीय टिप्पणियों को सार्वजनिक शैली का आधार स्वरूप मानते हुए मैंने यह विचार व्यक्त किया है कि अभिव्यक्ति की यह विधा सर्वसाधारण की है और इसी कारण इसकी शैली साधारण, सरल तथा लोगों का प्रवृत्युन्मुख बनाने में सक्षम होती है । थोड़ी बहुत भावुकता का पुट भी इसके लिए विशेष सामान्यतः है । पाठक की बुद्धि को नहीं हृदय को प्रभावित करना यहां लेखक का उद्देश्य रहना चाहिए । इस शैली के सम्बन्ध में कठिनाई यह है कि यद्यपि इसका स्वरूप अत्यंत सरल है तो भी इसका अर्जन उतना सरल नहीं है ।

विचारात्मक गद्य को विवेचनात्मक शैली का आधारभूत सिद्ध करते

हुए मैंने पचम अध्याय म यह दिखाने का प्रयास किया है कि अभिव्यक्ति की यह विधा विशेषज्ञों की है इसका उद्देश्य पाठक के मस्तिष्क को प्रभावित करना है न कि हृदय का। इसी कारण अधिक भावप्रवण होना इस शैली के लिए लाभदायक नहीं यद्यपि यह भी सत्य है कि कम स कम साहित्य के क्षेत्र में भावों एव अनुभूतियों की नितात उपेक्षा और बहिष्कार असमव है।

विवरणात्मक शैली भी सावजनिक शैली के समान सवसाधारण की है इन दोनों में अन्तर यह है कि एक सजनात्मक प्रक्रिया की कलात्मक बारीकियों से अभिमडित है जब कि दूसरी एक परिचयात्मक विधा है। विवरणात्मक शैली अपने मूल रूप में प्रभावात्मक है जो अपने पाठकों को अनन्त और अनश्वर सौन्दय क साक्षात्कार से मन्त्रमुग्ध करना चाहती है अपने पाठकों का मनोरजन उसका मूलभूत तत्व है।

साहित्यिक परम्परा जन ललित शैली का मैंने मूलत सस्कृत की देन माना है। यह कतिपय का व्य-रसिकों की चीज है। यहा आकर शैली साधन न रहकर साध्य बन जाती है। इस शैली का अलकृत रूप कवल बाहरी-तडक-भडक मात्र है तो भावात्मक रूप नितात स्निग्ध मनोहर है। अलकृत शैली के बावजूद यह पाठक को एक उच्च भूमिका पर ले जाने म भी सक्षम है, पाठक को सस्कृत बनाने प्रभावित करने में यह विशेष लाभदायक है।

अपने इस अध्ययनात्मक प्रयास में मुझे श्रद्धेय आचाय वाजपयी जी का पग-पग पर हस्तावलम्ब मिला है। स्नातकोत्तर परीक्षोत्तीण एक साधारण विद्यार्थी क रूप में मैं आपके पास आया था। जिस ममता और स्नेह से आपने मुझे अपनाया वही मेरे लिए यथेष्ट था, थके दिमाग और उदास दिल को लेकर जब कभी मैं आपके पास गया तो अपने अध्ययन में नई दिशा और नई उमग प्राप्त करके ही लौटा हू। श्रद्धेय गुरुवर के प्रति कृतज्ञता प्रकट करके ऋण मुक्त होना मेरा विचार नहीं है, अत यहां केवल इतना ही कहूगा कि अपने अध्ययन में आप मेरे लिए अनन्त प्रेरणा और अटल आत्म-विश्वास का अजस्र स्रोत रहे हैं।

इस अवसर पर, केरल विश्वविद्यालय के डा० पी० क नारायण पिल्ले जी और मार ईवानियस कालिज त्रिवेंद्रम के प्रो० पी० सी० देवस्या जी के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हू। मलयालम के इन दोनों विद्वानों से मुझे काफी सहायता मिली है। एस० टी० कालिज, पाला (केरल) के हिन्दी

विभागाध्यक्ष तथा मेरे गुरुवर प्रा० आर० एस० व्यथित जी के प्रति भी मैं हृदय से आभारी हूँ, हिन्दी अध्ययन और अनुसंधान के लिए मुझे इनसे काफी प्रेरणा मिली है। अपने इस प्रयास में मुझे अन्य अनेक महाशयों से भी यथेष्ट सहायता प्राप्त हुई है, उन सबके प्रति मैं आभारी हूँ।

अन्त में उन विद्वान और सहृदय साहित्य सेवियों के प्रति मैं सम्पूर्ण हृदय से अपना आभार और कृतज्ञता प्रकाशित करता हूँ जिनकी अनवरत साहित्यिक साधना के आधार पर मैंने अपना यह अध्ययन उपस्थित किया है।

हिन्दी-विभाग
सेंटजांस कालेज
अचल, केरल।

जेकब पी० जाज

विषय-सूची

आधुनिक
हिन्दी
गद्य
और
गद्यकार

१
विषय-प्रवेश

विषय का आशय और उसकी सार्थकता

भाषा अपने प्रारम्भिक दिनों में अत्यन्त सामान्य और साधारण स्वरूप को अपनाकर प्रादुर्भूत होती है। उस समय उसका न तो कोई सुनिश्चित और सुस्पष्ट स्वरूप रहता है और न विचारों एवं भावों की सम्यक अभिव्यक्ति की यथेष्ट शक्ति का उसमें संचार हो पाता है। न उसको बोलने वाली जनता गहन गम्भीर चिन्तन और स्निग्ध-मधुर भाव को भाषा के द्वारा अभिव्यक्ति के लिए बेचैन रहती है और न भाषा इन सबकी अभिव्यक्ति के लिए सक्षम रहती है। परन्तु परिवर्तनकारी समय के व्यतीत हो जाने पर जिस प्रकार भाषा-मात्र को बोलने वाली जनता के दिल और दिमाग परिष्कृत एवं सुरुचिपूर्ण बनते जाते हैं उसी प्रकार भाषा में भी अभिव्यक्ति की बारीकियों का संचार होता जाता है। प्रत्येक सम्पन्न भाषा में अभिव्यक्ति-जन्य बारीकियों के इस विकास का अपना एक इतिहास है जो वास्तव में उस भाषा-भाषी जनता की संस्कृति के विकास का ही इतिहास है। भाषा के परिष्कृत होते होते, प्रतिभावान साहित्यकारों के साथ में पड़कर वह भावों एवं विचारों की पूर्ण प्रभावोत्पादक एवं कुशल अभिव्यक्ति के लिए सक्षम बन जाती है और इस प्रकार उसमें शैली का प्रादुर्भाव संभव हो जाता है। शैली भाषा की अभिव्यंजना शक्ति का परिचायक है।

शब्दार्थ संपृक्त साहित्य में अभिव्यक्तिमात्र के माध्यम स्वरूप शब्द का, अर्थ के ही समान महत्व और स्थान आज तक स्वीकृत रहा है। महान

साहित्य क लिए इन दोना का समान रूप स सम्यक विकास नितान्त आव श्यक है इसके सम्ब ध म भी कोई सन्देह नहीं है। अत साहित्य क क्षेत्र म जिस प्रकार वस्तु पक्ष का अध्ययन अपन आप म महत्वपूण और अनिवाय है उसी प्रकार शली पक्ष का भी। भाषा इन दोनों म स किसी भी तत्व की उपक्षा कर प्रगति नहीं कर सकती।

शली का क्षत्र अपन आप म अत्यन्त उलझा हुआ है। यहाँ प्रथम कठिनाई यह है कि स्वय शली श द अत्यन्त तरल और अनिश्चित अथवाला है। इसक स्वरूप क सम्ब ध म इसक तत्वों क सम्ब ध म विद्वान एकमत नहीं हैं। शली क सम्ब ध म विद्वानों की धारणा म कितना वविध्य और वभिन्य है इसकी एक झाकी मात्र उपस्थित करन क लिए कवल कतिपय पाश्चात्य विद्वाना का शली विषयक परिभाषाओ का उल्लेख मात्र करना पर्याप्त होगा। कुछ विद्वाना क अनुसार शली म व्यक्तित्व ही सब कुछ है और अपनी इसी धारणा क अनुसार उन्होंन शली का परिभाषाबद्ध भी किया है। बफन का शली यक्ति ही ता है।[1] हडसन का शली अपन मूल रूप म एक वयक्तिक गण है।[2] एफ एल लूकास का साहित्यिक शली एक यक्तित्व का दूसर व्यक्तित्व का प्रभावित करन का साधन है।[3] पल बट का लखक क वयक्तिक निरीक्षण की विधि।[4] होस बालो का शुद्ध और व्यक्त शली लखक म भी उसी गुण का परिचायक है।[5] डिसरेली का शली क अलावा लखक क लिये कुछ दूसरा अपना नहीं।[6] माटेस का एक अच्छा लखक अन्य लेखका क समान नही लिखता उसकी अपनी

---

1 Style is the man himself Buffon

2 Style is fundamentally a personal quality An introduction to the study of Literature p 34

3 Literary style is simply a means by which one personality moves another Style p 48

4 It – style – is the writer s individual way of seeing things – Quoted J Middleton Murry The Problem of Style p 14

5 A chaste and lucid style is indicative of the same personal traits in the author Hosea Ballow

6 An author can have nothing truely his own but his style Disraelie

प्रणाली है [1] गोयथे का सामान्य रूप से कहा जा सकता है कि लेखक की शैली अपने मन का विश्वस्त अनुकरण है, [2] आदि कथन शैली विषयक इस रूढमूल धारणा के परिणाम स्वरूप हैं।

इसी प्रकार शैली में भाषा का महत्व देते हुए कहा जाता है शैली अपने आधुनिक अर्थ में साहित्य-सृजन का वह तत्व है जिसका सम्बन्ध वाक्य संगठन उसके चयन आदि से है [3] शैली का अर्थ रचना के लिए शब्दों के प्रयोग की विधि [4] उपयुक्त शब्दों का उपयुक्त स्थान पर प्रयोग ही शैली है, [5] आदि। इनके अतिरिक्त शैली को केवल एक अतिरिक्त आभूषण मात्र मानकर उसे विचारों का परिधान [6] अनुभूत विषय-वस्तु को सजाने के उन तरीकों का नाम जो उस विषय वस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एवं प्रभावपूर्ण बनाते हैं [7] आदि भी कहे गए हैं। विद्वानों का एक अन्य वर्ग शैली में वस्तु-तत्व को महत्ता देते हुए कहता है कि अच्छी शैली का उत्स फूला फला महान वक्तव्य वस्तु है [8] शैली का सौन्दर्य अभिव्यक्त विचार धारा पर आधृत है [9] आदि। कुछ विद्वानों ने अभिव्यक्ति के किसी न किसी गुण के आधार पर शैली की परिभाषा निर्धारित करने का प्रयास किया है

---

1 A good writer does not write as people write but as he writes — Montesqire

2 Generally speaking an author s style is a faithful copy of his mind — Goethe

3 Style in our modern sense as a theory of composition is an art of constructing sentences and weaving them into coherent wholes — Thomas Dequiency

4 Style means the way in which we use words for the purpose of composition — R A Scott-James

5 Proper words in proper order— Swift

6 (a) The dress of thought — Pope

(b) A good styl fits like a good costume — Alcott

७ हिन्दी—साहित्य कोश

८ The chief stimulus of a good style is to possess a full rich complex matter to grapple with — Walter Pater Appreciation with an essay on Style

9 Style receives its beauty from the thought it expresses — Authur Schopenhaur

जस मरे साहब का कहना कि शैली भाषा का वह गुण है जिसके द्वारा लेखक की अनुभूति या विचारधारा का यथातथ्य अभिव्यक्ति सम्भव है। [1] कुछ लेखकों की दृष्टि में चयन और व्यवस्था ही शैली में महत्वपूर्ण है। [2] कुछ लोग मानते हैं कि शैली अनावश्यक और उपरिप्लवात्मक सभी बातों के परित्याग से प्रादुर्भूत होती है। [3] किसी किसी की दृष्टि में औचित्य ही शैली की परिभाषा का आधार है। [4] ऐसे भी विद्वान हैं जिन्होंने प्रभावोत्पादन की क्षमता को महत्व दिया है। [5]

ऐसे उलझे हुए किन्तु नितांत महत्वपूर्ण विषय के विवेचन एवं स्पष्टीकरण में आधुनिक भारतवर्ष में अपेक्षाकृत कम ही प्रयास किया गया है। हाँ, इतना अवश्य है कि हमारे प्राचीन आचार्यों ने रीति विवेचन के अभिधान से शैली के अध्ययन और मनन का अद्वितीय और महान प्रयत्न किया है। लेकिन उन लोगों की मौलिक विचारधारा की परम्परा को आगे बढ़ाने का कार्य आगे सम्भव नहीं हुआ। हमारे यहां शैली के सैद्धांतिक विवेचन का प्रयास अत्यन्त अल्पमात्रा में ही हुआ है। इधर उधर प्राप्त शैली सबंधी प्रसंगगत उल्लेख— जो अधिकतर अपूर्ण ही रहा करता है— के अतिरिक्त करुणापति त्रिपाठी जी की एक अत्यन्त साधारण कोटि की छोटी सी किताब ही हिन्दी में अब तक इस संबंध में उपलब्ध होती है। इसके अतिरिक्त डा० शंकरदयाल

---

1 Style is a quality of language which communicates precisely emotions or thoughts or a system of emotion or thoughts peculiar to the author
The problem of Style p 71

2 Style consists in order and movement which we introduce into our thought Buffon Discourse on Style

3 A pure style in writing results from the rejection of everything superfluous Mone Necker

4 (a) There is nothing in words and styles but suitableness that make them acceptable and effective Glanvill

(b) The first requisite of style not only in rhetoric but in all composition is perspicuity Whately

५ प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति ही शैली का अथ और इति है (बर्नार्ड शा) उद्धृत हिन्दी साहित्य काश शैली।

चौऋषि ने अपने शोध प्रबन्ध 'द्विवेदी युग की हिन्दी गद्य शैलियो का अध्ययन, की पृष्ठभूमि के रूप म शैली सम्बन्धी थोड़ा बहुत विवेचन किया है। परन्तु पूर्वधारणाओ स मुक्त शैली का व्यापक व्याख्या यहाँ भी सभव नहो हुई है। शैली के अर्थ शैली और व्यक्तित्व, शैली के उपकरण शैली के प्रमुख तत्व, गद्य शैली की विशेषताए, भारतीय रीति और पाश्चात्य शैली का सम्यक व्याख्या आदि शैली सम्बन्धी अनक मौलिक समस्याओ की दृष्टि स शैली का सम्यक विवेचन अब भी उपेक्षित रहा। इसके विपरीत पाश्चात्य देश न आधुनिक युग म आकर इस विषय म भी क्रांति उपस्थित की है सर वाल्टर रले मिडिल्टन मर, आतर विवल्चर कौच हेरबट रीड एफ० एल० लूकास आदि दजनो विद्वानो न, शैली सम्बन्धी प्लेटो और अरिस्टोटिल के समय स प्रचलित विचारधारा को अपन मौलिक चिंतन के द्वारा आगे बढ़ाया है। इन सबको देखत हुए कहना पड़ता है कि शैली विवेचन के प्रति आधुनिक भारतवर्ष अधिकतर उदासीन ही रहा है।

सद्धांतिक समीक्षा को छोड़कर व्यावहारिक क्षेत्र म भी साहित्य का यह महत्वपूर्ण अंग बहुत कुछ उपेक्षित ही रहा है। मुख्यरूप से केवल दो ही हिन्दी के विद्वान अब तक इस ओर प्रवृत्त हुए हैं। डा० जगन्नाथप्रसाद शर्मा 'हिन्दी गद्य शैली का विकास और श्री शंकरदयाल चौऋषि द्विवेदी युग की हिन्दी गद्य शैलियों का अध्ययन सागर विश्वविद्यालय की पी एच० डी० की उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध हैं।

शैली समीक्षा के क्षेत्र म शर्मा जी का काय हमारा प्रथम प्रयास कहा रहा है। वस तो उन्होंन हिन्दी गद्य के उदय—युग से लेकर १९३५ तक—हमारे गद्य के विकास तथा उसके प्रमुख उन्नायको की शैलियों (इतिवृत्तात्मक भावात्मक आदि शैलियों) के अध्ययन का प्रयास किया है। विद्वान लेखक ने अपन इस स्तुत्य प्रयास म शैली के सद्धांतिक विवेचन को वांछित महत्व नहीं दिया है। उनके पूरे ग्रंथ को अवधानपूर्वक पढ़ने के बाद भी शैली का स्वरूप गद्य तथा गद्य-शैली म अन्तर आदि विषय की मूलभूत समस्याओं का कोई समाधान पाठकों के सामन नहो आता। भावो की भावात्मक, इतिवृत्तात्मक आदि शैलियों का लेखक विशेष के नाम के साथ उल्लेख अवश्य हुआ है, परन्तु शैलियो का वर्गीकरण, स्वरूप निरूपण विकास क्रम आदि की ओर विद्वान लेखक का ध्यान नहीं गया है। समस्त रूप से कहा जाय तो शर्मा जी के गद्य-शैली का विकास वास्तव म हिन्दी गद्य मात्र का विकास है न कि

शैली का विकास । अनेक स्थानों पर लेखक गद्य और शैली को एक ही मान कर चले है जैसे शुक्ल जी के सबंध म विचारात्मक गद्य का उल्लेख आदि। कुल मिलाकर शर्मा जी का काय इस सब ध मे हमारा प्रारम्भिक प्रयास ही रहा है ।

चौऋषि जी अपने शोध प्रबन्ध म शर्मा जी के प्रयत्न को आगे बढ़ाने की ओर कम प्रयत्नशील दिखाई पडते हैं । उ होन भी अपन काय को १९५० तक सीमित तो रखा है सो छोड दीजिए परन्तु विषय की पकड उनके प्रबन्ध म भी विद्यमान नहीं है । शर्मा जी के विवेचन से यदि गद्य और गद्य शैली का पार्थक्य स्पष्ट नही होता तो चौऋषि जी ने अपने विवेचन से इस ओर भी उलझा हुआ बना दिया है । शर्मा जी ने यदि हिन्दी गद्य मात्र के विकास का ही इतिहास प्रस्तुत किया है— और गद्य के विकसित होने के बाद ही शैली प्रादुर्भूत होती है— तो चौऋषि गद्य की निबन्ध उपन्यास, कहानी, नाटक पत्र पत्रिकायें गद्यकाव्य आदि विभिन्न विधाओं म फस गए । उन्होंने भी गद्य और गद्य शैलियों का अन्तर दिखाते हुए शैलियों के विकास एवं विवेचन म प्रयास नही किया है । गद्य-शैलियों का वर्गीकरण स्वरूप आदि के सब ध में वे भी चुप हैं । शैली विवेचन के नाम से बहुत कुछ गद्य विधाओं का विवेचन ही यहा उपस्थित किया गया है । हाँ इतना अवश्य महत्वपूर्ण रहा है कि इन्होंने शर्मा जी की अपेक्षा शैली में विषय के महत्व को स्वीकृत किया है ।

शैली विवेचन म विभिन्न शैलियों का वर्गीकरण प्रत्येक शैली के सामान्य स्वरूप की पृष्ठभूमि म प्रत्येक के विकास-क्रम का अध्ययन आदि की ओर अब तक हिन्दी क्षेत्र म बहुत कम ही प्रयास किया गया है ।

गद्य के विकसित होने के बाद ही शैली प्रादुर्भूत होती है यह बिलकुल ठीक है । साथ ही यह भी मानना पडेगा कि गद्य की पृष्ठभूमि म ही गद्य शैली का विवेचन सम्भव है । परन्तु गद्य और गद्य शैली म कोई अन्तर न मानना ठीक नहीं होगा । यह तो अपने प्रारम्भिक दिनों से ही गद्य का प्रयोग अभिव्यक्ति के विभिन्न क्षेत्रों म होता रहा है और इसी कारण उसमें विभिन्न शैलियों का स्वरूप भी—थोड़ा बहुत अन्तर के साथ ही सही—अपने प्रारम्भिक समय से ही प्रस्फुटित और विकसित होते दिखाई देता । हाँ प्रतिभावान लेखकों के हाथ म पडकर ही प्रत्येक शैली अपना एक परिनिष्ठित और सर्वसम्मत रूप धारण कर सकती है, जैसा कि हिन्दी म आचार्य महावीर प्रसाद द्विवे । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जयशंकर प्रसाद तथा प्रेमचन्द के

कारण सार्वजनिक विवेचनात्मक भावात्मक एवं वर्णनात्मक शैलियाँ परिनिष्ठित रूप धारण कर सकी हैं।

विचार कर देखने से विदित होगा कि शैली के प्रमुख तीन तत्व हैं शैली व्यक्ति सापेक्ष है वस्तु-सापेक्ष है और है समय सापेक्ष भी। जिस प्रकार व्यक्ति-व्यक्ति में वह रूप बदलती रहती है उसी प्रकार विषय विषय में भी। विषय का शैली के ऊपर प्रभाव के कारण ही एक ही लेखक द्वारा विभिन्न विषयों पर लिखित लेखों में शैली सम्बन्धी विभिन्नता दृष्टिगत होती है। इसी प्रकार एक ही लेखक के द्वारा एक ही विषय पर विभिन्न अवसरों पर किए गए साहित्यिक प्रयासों में शैली— सबधी जो अन्तर है उसका मूल कारण समय के साथ भाषा तथा व्यक्तित्व में परिवर्तन ही है। अतः इन तीनों तत्वों का यथार्थ महत्व देते हुए व्यक्तित्व की पृष्ठभूमि पर, विषय विभाग का आधार बनाकर शैलियों के वर्गीकरण स्वरूप निरूपण और विकास सम्यक अध्ययन के द्वारा बीसवीं शताब्दी में विभिन्न प्रकार की शैलियों तथा उनके उन्नायकों का उद्घाटन नितांत सार्थक समझा गया है।

गद्य शैली से हमारा प्रयोजन

अब एक दूसरा प्रश्न यह हमारे सामने आता है कि शैली के अध्ययन का क्या प्रयोजन है? कुछ लोग कहते हैं कि शैली केवल कतिपय विद्वानों की चीज है साधारण जनता क्या साधारण साहित्यकार के लिए उसका अध्ययन विशेष लाभप्रद नहीं है। आलोचकों का एक अन्य विभाग ऐसा भी कह सकता है कि आधुनिक वैज्ञानिक युग में इस प्रकार का अध्ययन कोरा बकवाद मात्र है। परंतु ये सब आलोचनाएँ शैली के स्वरूप सबंधी अपूर्ण या गलत धारणाओं के परिणामस्वरूप हैं। शैली का तात्पर्य है वक्तव्य को पूर्ण तथा प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति और इस दृष्टि से साधारण से साधारण आदमी से लेकर बड़े से बड़े वैज्ञानिक तथा साहित्यकार तक कोई भी तिरस्कार नहीं कर सकता। दूसरे शब्दों में शैली मानव मात्र के दैनिक जीवन का अभिन्न अंग है और उसकी उपेक्षा करके कोई अपनी जीवन लीला में विजयी नहीं हो सकता। शैली का अध्ययन मानव मात्र के सफल जीवन के लिए अनिवार्य है।

साहित्य के क्षेत्र में शैली का अध्ययन और महत्वपूर्ण है। साहित्यकार का भावजगत् अपने संपूर्ण विभूतियों के साथ पाठक के सामने जब तक

आ उपस्थित नहीं होता जब तक अपने भावजगत की निराली छटा से साहित्यकार अपने पाठक को विभूषित करने में समर्थ नहीं होता। अर्थात जब तक साहित्यकार अपने वक्तव्य की पूर्ण तथा प्रभावात्मक अभिव्यक्ति में सफलता नहीं पाती तब तक सच्चे अर्थ में वह साहित्यकार के नाम का अधिकारी नहीं है। अनुभूतियों और विचारधाराओं की इस प्रकार अभिव्यक्ति शैली का काम है और इसी कारण शैली का अध्ययन साहित्यकार के लिए अनुपेक्षणीय है। इसी प्रकार जब तक पाठक भाषा विशेष की बारीकियों और विशिष्टताओं से अनभिज्ञ रहता, तब तक लेखक की विशिष्ट अनुभूतियों की महान अभिव्यक्ति का आस्वादन उसके लिए सम्भव नहीं है। यह तथ्य इसी एक बात से विदित होता है कि यद्यपि हम सामान्य अर्थ में एक भाषा से अच्छी तरह परिचित हैं, तो भी उस भाषा की महान साहित्यिक अभिव्यक्तियों का समझने में अक्सर असमर्थ रहते हैं। इसका कारण यह है कि महान अभिव्यक्ति भाषा की विजय उतनी नहीं है जितनी कि भाषा के ऊपर विजय। अतः शैली के अध्ययन की सबसे बड़ी उपयोगिता यह है कि वह भाषा के ऊपर विजय पाने का साधन है।

भाषा के ऊपर विजय से लाभ यह सिद्ध हो जाता है कि मंतव्य की सफल अभिव्यक्ति की शक्ति का उपार्जन हो जाता है। यद्यपि इस उक्ति का किसी महान वस्तु की अभिव्यक्ति स्वाभाविक रूप से महान होगी

When the subject is great and the sentiment then of necessity great the word—

आंशिक रूप से स्वीकार की जा सकती है, तो भी महान अभिव्यक्ति सदैव प्रयत्नसाध्य है। साहित्यकार और साहित्यास्वादक दोनों को इस ओर प्रयत्नशील रहना पड़ता है। विषय-वस्तु की महत्ज अभिव्यक्ति ही तो दोनों है परंतु यह सहजता कि एसी नहीं बाजार में उपलब्ध हो। महान साहित्यकार सदैव अपने समय के आगे रहता है और इसी कारण उसका भावजगत समसामयिक साधारण जनता के भावजगत् से दूर का है। इस प्रकार युग द्रष्टा युगनिर्माता और युग परिवर्तनकारी साहित्यकार की महान अनुभूतियों का अभिव्यक्ति प्रयत्न-साध्य हो है और उसका अर्जन और आस्वादन दोनों भाषा की शक्ति तथा बारीकियों के अध्ययन पर निर्भर हैं।

अपनी भाषा की बारीकियों के इस अध्ययन का सहज परिणाम यह भी निकलता है कि हम भाषा की जातीय शैली से परिचित हो जाते हैं और

भाषा की शुद्धता तथा सहजता का पालन और उसके उचित मार्ग में विकास के लिए यह ज्ञान नितांत आवश्यक है। जिस प्रकार व्यक्ति-विशेष अपने को पहचाने बिना अपनी शक्ति अशक्ति से सामर्थ्य असामर्थ्य से परिचित हुए बिना प्रगति नहीं कर सकता, उसी प्रकार भाषा भी अपनी असली पहचान के बिना प्रगति के पथ पर अग्रसर नहीं हो सकती।

भाषा की सफलता असफलता तथा शक्ति-अशक्ति का यह अध्ययन आधुनिक युग के निरंतर परिवर्तनोन्मुख और संघर्षपूर्ण जीवन में नितांत आवश्यक है। निरंतर परिवर्तनशील इस जगत में मानव का भावजगत और बुद्धिगत भी सदैव परिवर्तित होते रहते हैं। मानव निरंतर नये-नये आविष्कार करता रहता है और इसका सहज परिणाम भाषा के ऊपर भी पड़ता है। जब तक इन नये तत्वों की अभिव्यक्ति की क्षमता भाषा अर्जित नहीं करती तब तक उस भाषा भाषी जनता का विकास अवरुद्ध रहेगा। इसी प्रकार, यद्यपि मानव ने बुद्धिजीवी होने का दावा किया है तो भी वह अपने मूल और सहज रूप में भाव प्रवण है, उसके जीवन का मूल तत्व अब भी वास्तव में बुद्धि नहीं बल्कि भाव है और इसी कारण जब तक उसके उलझे हुए भावों एवं अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए उचित साधन नहीं मिलता तब तक वह प्रगति की ओर नहीं विनाश की ओर ही अग्रसर रहेगा। इन सबके लिए एकमात्र साधन भाषा पर अधिकार है और यही शैली के अध्ययन का सहज परिणाम और प्रयोजन है। गद्य मानव के दैनिक जीवन का अभिन्न अंग होने के कारण गद्य शैली का अध्ययन विशेष लाभदायक है इसमें संदेह नहीं।

गद्य और गद्य शैली का अंतर

शैली का संबंध प्रतिपाद्य वस्तु की अभिव्यक्ति से है यह एक सर्वविदित तथ्य है। अब प्रश्न यह सहज रूप में सामने आता है कि शैली क्या अभिव्यक्तिमात्र है या विशिष्ट अभिव्यक्ति? दूसरे शब्दों में प्रश्न यह है कि शैली अभिव्यक्ति का सामान्य तत्व है या विशेष तत्व। वास्तव में यह कोई नयी समस्या नहीं है। प्लेटो और अरिस्टाटिल के समय से ही इसके सम्बन्ध में विवाद चलता चला आ रहा है। प्लेटो-सम्प्रदाय के सभी लोगों का विचार है कि शैली वह गुण है जो कुछ अभिव्यक्ति में होता है और कुछ में नहीं। परन्तु अरस्तू सम्प्रदाय के लोग इसके शैली को एक व्यापक तत्व मानते हैं। उनके अनु-

सार जितने लेखक हैं उतनी शैलियाँ भी हैं।[१] भारत में भी वामन आदि ने रीति को अच्छे लेखक का ही धर्म माना है।

शैली का सम्बन्ध केवल अभिव्यक्ति मात्र से नहीं है उसका तात्पर्य है विषय वस्तु की पूर्ण अभिव्यक्ति प्रभावयुक्त अभिव्यक्ति, औचित्यपूर्ण अभिव्यक्ति विषय तथा व्यक्तित्व प्रेरित वैशिष्ट्यों से युक्त अभिव्यक्ति। शैली केवल वाग्जाल मात्र नहीं है। शैली अपने आप में साहित्य का चरम लक्ष्य भी नहीं हो सकता। वह विषय वस्तु से लेखक के व्यक्तित्व से अभिन्न है अभेद्य रूप से सम्बन्धित है। अतः जब तक विषय वस्तु की पूर्ण और प्रभावात्मक अभिव्यक्ति सम्भव नहीं होती तब तक शैली भी प्रादुर्भूत नहीं होती। और अभिव्यक्ति की पूर्णता और प्रभावोत्पादन की क्षमता के निश्चय करने का अधिकारी पाठक है न कि स्वयं लेखक। जब तक लेखक का भावजगत अपने पूर्ण रूप में यथातथ्य रूप में पाठक के सामने आ नहीं उपस्थित होता तब तक वह अभिव्यक्ति शैली पद की अधिकारी नहीं है। शैली की प्रभावोत्पादकता भी अनेक बातों पर आधृत है। विषय-वस्तु से उसका सीधा सम्बन्ध है। जब तक लेखक का भावजगत फीका रहेगा तब तक केवल शब्दों की करामात से पाठकों को प्रभावित करने का प्रयत्न उपहासास्पद मात्र रहेगा दूसरे शब्दों में अभिव्यक्ति विशेष को शैली संज्ञा के अधिकारी बनने की प्रथम शर्त यह है कि केवल भावजगत भरा पूरा और आकर्षक हो। अब प्रश्न यह है कि केवल भावजगत की महानता के कारण शैली प्रादुर्भूत हो सकती है? नहीं। जब तक उस भावजगत की अभिव्यक्ति भावानुसार महानता को अपने में समेटे हुए नहीं आती तब तक शैली प्रादुर्भूत नहीं होती। तो अभिव्यक्ति कैसे महान हो सकती है? अभिव्यक्ति का माध्यम है भाषा—ध्वनि शब्द, वाक्य अनुच्छेद आदि। इन सबका उचित प्रयोग ही अभिव्यक्ति की महानता का परिचायक है और इस उचित प्रयोग की क्षमता लेखक के व्यक्तित्व पर उसके पांडित्य चिंतन और मनन पर निर्भर है। इसी प्रकार विषय विशेष को लक्ष्य में रखते हुए अभिव्यक्ति को सर्जनात्मक प्रक्रिया के वैशिष्ट्यों से भी अभिमण्डित करना परम आवश्यक है। सभी विषयों का उद्देश्य एक सा नहीं रहता। लेखक की शैली विषय की उद्देश्यानुसार अभिव्यक्ति का माध्यम मात्र है। इसी कारण जब वह साधारण जनता को दृष्टि में रखकर

१— पं० सीताराम चतुर्वेदी क—समीक्षा शास्त्र पृ० ५५६
ख—हिन्दी साहित्य सर्वस्व पृ० ६०१

पत्र-पत्रिकाओं म लिखेगा तब उस नितांत सरल रखन का प्रयत्न अवश्य करेगा। इसके विपरीत गंभीर चिंतन और मनन आदि के अवसर पर शैली भी उसी के अनुसार परिष्कृत गंभीर और सघन रूप धारण करती है। मनो विनोदाय प्रणीत उपन्यास आदि म शैली भी मनोरंजक तत्वों से अभिम डित रहेगी। पाठक को प्रभावित करने के लिए य सब नितांत आवश्यक हैं।

अर्थात शैली प्रत्यक अभिव्यक्ति का साधारण धम नहीं है वह विशिष्ट अभिव्यक्ति का सहज धम है। गद्य इन तत्वों स अभिव्यक्त हो जाता है तो शैली प्रादुर्भूत हो जाती है। गद्य म जब अभिव्यक्ति मात्र के भावप्रेरित वैशिष्टय जिसके औचित्य का निणय पाठक करेंगे और जो अभिव्यक्ति को पूण प्रभावोत्पादक तथा आकर्षक बनाने के लिए सक्षम है—का समावेश होगा, तब वह शैली पद का अधिकारी बन जाता है। दूसरे शब्दों म गद्य शैली का केवल शरीर है शैली का आत्मा है गद्य का भावप्रेरित वैशिष्टय।

२

शैली सैद्धांतिक विवेचन

शली शब्द प्रयोग और अथ विकास

हिन्दी क अद्यतन काव्य शास्त्र म प्रयुक्त 'शली' श ‍ अपन आधनिक अथ म साहित्य-शास्त्रो क लिए ममान रूप म एक नवीन उपल‍ध है। इसका मतलब यह कदापि नहीं है कि यह श‍ नितांत नूतन है या इस श‍ का पहल प्रयोग ही नहीं हुआ है अथवा भारतीय वांगमय के लिए य‍ श एकदम अपरिचित था। वस ता शली शब्द अत्यत प्राचीन है और इसकी उत्पत्ति शील श‍ से हुई है शीलमव स्वार्थेगणडीया चारित्र आचार्याणामिय शलोयत्सामा‍यनामिधाय विशेषण विवणातीति प्राञ्च[1]॥ सस्कृत म इस श‍ का सवप्रथम प्रयोग कुल्लूल भटट (सन् ११५० १३०० क लगभग) न मनुस्मति की टीका म किया है जहां पर 'शली श‍ किसी सूत्र की व्याख्यान पद्धति क लिए प्रयुक्त जान पडता है प्रायेण आचार्याणामिय शैली यत सामा‍यनामिधाय विशेषण विवणाति इस प्रकार सस्कृत म अपन प्रारंभिक प्रयोग में यह श ‍ आलोचनात्मक ग्र‍था की रचना प्रणाली के लिए ही प्रयुक्त किया गया था।

१— प० तारानाथ तकवाचस्पति भट्टाचाय श‍स्ताम महानिधि पृ० ४४८

२— कुल्लूक भटट की टीका मनुस्मति १ ४ बल‍व उपाध्यायकृत भारतीय साहित्य शास्त्री स डा० नगे‍द्र द्वारा भारतीय काव्य शास्त्र की भूमिका पृ० ५३ में उद्धत।

लेकिन हमारे आधनिक काव्य शास्त्र म शली श द का अथ नितात भिन्न है उसका सबध अब साहित्य म अभि यक्ति के साथ स्थिर किया गया है और अभिव्यक्ति की पद्धति के अर्थ म शैली का प्रयोग आधुनिक ही है । ¹ हिंदी म इस म इस शब्द का अपन अद्यतन अर्थ म प्रचार और प्रसार अंग्रेजी क 'स्टाइल (style) श द के परिभाषा स्वरूप हुआ है और इस दृष्टि स यह अंग्रजी का ऋणी है ।

शली और रीति

कतिपय आलोचकों ने स्टाइल शब्द के पर्याय के रूप म रीति शब्द क प्रयोग क विरुद्ध चेतावनी दी है । इससे सिद्ध हो जाता है कि शैली और रीति श द पर्यायवाची नहो हैं । पाल जी का यह मत है कि रीति शब्द अंग्रजी के स्टाइल श द के जस कवि व्यक्तित्व-अभिव्यक्ति का द्योतक नहीं है । सुप्रसिद्ध विद्वान सुनीति कुमार च न भी यही मत व्यक्त किया है । इस सबध में हमारे आलोचको क मुख्य रूप स तीन विभाग हैं कुछ लोगों का मत है कि शैली और रीति पर्यायवाची शब्द नहीं हैं जसे आचार्य सीताराम चतुर्वेदी करुणापति त्रिपाठी आदि । चतुर्वेदी जी कहते हैं कुछ लोगों न रीति को ही शैली मान लिया है । किंतु रीति केवल काव्य रचना का ढग है । इसके विपरीत शली वह साधन है जो वाणी की अभिव्यक्ति म अभिनय आकर्षण शक्ति का सचार करे । वामन न पदों की विशेष रचना को रीति (विशिष्टा पद रचना रीति) माना है किन्तु गुणों क आधार पर दी हुई विशेष पद रचना की इस रीति का शली क विशिष्ट और व्यापक रूप से सवथा भिन्न मानना चाहिए । ² करुणापति त्रिपाठी क अनुसार कुछ लोगों म यह एक साधारण भ्रम सा चल पडा है कि भारतीय साहित्य शास्त्र म वर्णित रीति ही आधुनिक साहित्य शली है । कुछ दूर तक यह ठीक भी कहा जा सकता है । प्राचीन रीतियां काव्य शलियां ही हैं । किन्तु आजकल साहित्य जगत म शैली क नाम स जिस तत्व का बोध होता है वह प्राचीन आचार्यों द्वारा वर्णित रीतियां नहीं हैं वरन् वे साहित्यिक अभिव्यक्ति की प्रणालियां हैं । अत रीति और शली का तात्विक अन्तर यही है कि पहली तो काव्य रचना

१— डा० नगन्द्र भारतीय काव्य-शास्त्र की भूमिका पृ० ५३ ।
२— डा० नगन्द्र भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका, पृ० ५३ ।
३— हि ी साहित्य सवस्व पृ० ११० ।

की रीति ह और दूसरी साहित्य की अभिव्यक्ति प्रणाली ह । दोनों की आधार भित्ति म तात्विक अन्तर ह । शैली उस साधन का नाम ह जो वाक्यशक्ति की अभिव्यक्ति मे अभिनय तथा समर्थ शक्ति का सचार कर । पर वामन ने काव्यालकार सूत्र वृत्ति म पदों की विशेषवती रचना को रीति माना ह । अस्तु कहने का तात्पय यह ह कि गुणों के आधार पर की गई विशिष्ट पद रचना रूप रीति शैली स भिन्न है ।[1] इस सम्बन्ध म मलयालम क लब्ध प्रतिष्ठित आलोचक एम० पी० पाल का अभिमत हमने उद्धृत किया है ।[2]

इसक विपरीत प० बलदव उपाध्याय प० रामदहिन मिश्र आदि आलोचकों ने शैली और रीति म कोई अन्तर नहीं माना है । उपाध्याय जी लिखते हैं अग्रजी भाषा म रीति (माग क) लिए स्टाइल शब्द प्रयुक्त होता है । प० रामदहिन मिश्र क अनुसार 'रीति या वृत्ति का आधुनिक नाम शैली ह ।'[4]

इन दोनों विभागों क आलोचकों क अतिरिक्त कतिपय विद्वान ऐसे भी हैं जो शैली और रीति मे ईषद अन्तर मानते हैं जैसे हिन्दी म डा० नगेन्द्र य लिखते हैं विशिष्ट अथ म रीति और शैली म बहुत अन्तर नहीं है । शैली के दो मूल तत्व हैं एक व्यक्ति तत्व और दूसरा वस्तु तत्व । वास्तव में शैली के व्यक्तित्व और वस्तु तत्व म व्यक्ति-तत्व ही प्रधान है, उसी के द्वारा शैली के बाह्य उपकरणों का समन्वय-अनकता म एकता की स्थापना करता है । वयक्तिक तत्व क दो रूप हैं एक तो शैली द्वारा कवि की आत्माभिव्यजना अर्थात शैली का आत्माभिव्यजक रूप और दूसरा पात्र तथा परिस्थिति के साथ शैली का सामजस्य । भारतीय रीति-विवेचन पहला रूप विरल है । परन्तु इस प्रसग म एक बात याद रखनी चाहिए । इसमें संदेह नहीं कि उसे वाछित महत्व नहीं दिया गया । फिर भी उसकी स्वीकृति का सवथा अभाव नहीं है । वयक्तिक तत्व के दूसरे रूप का विधान तो भारतीय काव्यशास्त्र में निश्चय ही मिलता है । यद्यपि वामन ने इसका स्पष्टीकरण नहीं किया किंतु वामन स पूर्व भरत न स्पष्ट निर्णय दिया

१— शैली पृ० ११९-१२० ।
२— पीछे देखिए पृ० ४ ।
३— भारतीय साहित्य शास्त्र का दूसरा भाग पृ० २१३ ।
४— काव्यालोक द्वितीय उद्योत पृ० ३३ ।

है कि नाटक में भाषा पात्र के शील-स्वभाव की अनुवर्तिनी होनी चाहिए। उधर आनंदवर्धन ने तो वक्ता, वाच्य और विषय के औचित्य को रीतियों का नियामक ही माना है।[1] इस विवेचन का उपसंहार करते हुए वे लिखते हैं

१—रीति और शैली का वस्तु तत्व एक ही है। आरम्भ में भरत और यूरोप दोनों के काव्य शास्त्रों में प्राय वस्तु रूप का ही विवेचन हुआ है। २—भारतीय रीति में व्यक्ति-तत्व की सर्वथा अस्वीकृति नहीं है जैसे कि दण्ड आदि ने माना है। ३—फिर भी अपने वर्तमान रूप में शैली में व्यक्ति तत्व का जितना महत्व है उतना भारतीय रीति में कभी नहीं रहा। ४—इस प्रकार रीति और शैली के वर्तमान रूप में व्यक्ति-तत्व की मात्रा का अन्तर अब ये हो गया है।[2]

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने डा० नगेन्द्र से भी एक कदम और आगे बढ़ाते हुए कहा है रीति का मूल अर्थ संघटना है। संघटना किसकी? यह प्रश्न उठने पर हम कह सकते हैं संघटना शब्दों और वाक्यों की संघटना काव्य के वस्तुपक्ष के साधन रूप अभिव्यंजना की। यद्यपि रीति शब्द से कवि की वैयक्तिक और स्वभावगत विशेषताओं का भी आशय सैद्धांतिक रूप से रीतिवादियों ने स्वीकार किया है परन्तु व्यावहारिक भूमिका पर रीति का उपयोग वैयक्तिक विशेषताओं के निर्धारण में अत्यल्प हुआ है। आज शैली शब्द का प्रयोग कला और शिल्प के समस्त उपकरणों की अभिव्यक्ति के लिए किया जाता है। रीति और शैली शब्दों में बहुत दूर तक समानार्थकता है। रीति और शैली का जो विषयगत स्वरूप प्रारम्भ में प्रचलित था उसमें तो कोई विशेष अंतर है ही नहीं। आधुनिक युग में कवि की शाब्दिक भाषागत योजनाओं के विवेचन में भी रीति और शैली शब्द समान अर्थ में व्यवहृत हो सकते हैं। इससे आगे बढ़कर जब कवियों और लेखकों की व्यक्तिगत और स्वाभाविकता विशेषताओं का विवेचन शैली की सीमा में होने लगा तब रीति शब्द का प्रयोग घटता गया। यद्यपि रीति शब्द में इतना सामर्थ्य है कि हम चाहें तो कवियों और लेखकों की रूपगत वैयक्तिक विशेषताओं तक रीति का प्रयोग कर सकते हैं।[3]

१— भारतीय काव्य शास्त्र की भूमिका पृ० ५३ ५४।
२— वही, पृ० ५४ ५५।
३— रीति और शैली नामक निबन्ध से आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी।

इस विवेचन से विदित है कि रीति और शैली की मूलभूत एकता का आचार्य वाजपेयी जी ने स्वीकार किया है।

अब हमारे सामने प्रश्न यह है कि शैली तथा रीति को एक मान या उन दोनों में कोई मूलभूत वैषम्य को स्वीकार करें। यदि हम रीति और शैली को अलग अलग मानें तो उसका तात्पर्य क्या यह नहीं है कि शैली विवेचन भारतीय काव्यशास्त्र के लिए एक नवीन उपलब्धि है जो पाश्चात्य की देन है। अतः चिन्तनीय है कि भारतीय रीति विवेचन तथा पाश्चात्य शैली विवेचन में कहाँ तक साम्य है और हमारे आचार्यों ने रीति विवेचन में व्यक्तित्व को क्या स्थान दिया है।

हाँ यह बिलकुल ठीक है कि हिन्दी में आजकल व्यवहृत शैली शब्द का प्रयोग किसी भी अलंकार शास्त्र के ग्रन्थों में नहीं मिलता।[१] लेकिन इसका मतलब यह कदापि नहीं हुआ कि शैली विवेचन हमारे काव्य शास्त्र के लिए नितांत नई चीज है। वैसे तो हमारे साहित्य शास्त्र के प्रारम्भिक युग में ही हम इस ओर संकेत मिलता है। भरत मुनि ने अपने नाट्य शास्त्र में 'प्रवृत्ति विवेचन' के अन्तर्गत शैली के अर्थ की ओर इंगित किया है। भरत की व्याख्या के अनुसार प्रवृत्ति वह है जो पृथ्वी पर के नाना देशों के वेश भाषा तथा आचार की वार्ता का स्थापन करें। प्रवृत्ति रीति कस्मात? उच्यते पृथिव्यां नाना देश वेश भाषाचारवार्ता स्थापयतीति प्रवृत्ति। वृत्तिश्च निवेदने।[२] भरत के इस विवेचन में भारतीय रीतिविवेचन का बीजरूप विद्यमान है ही साथ ही उनके प्रवृत्ति शब्द का अर्थ अधिक व्यापक भी है–वह भाषा से ही नहीं पूरे रहन-सहन के ढंग में सबंधित है जो आधुनिक शैली के व्यापक अर्थ की ओर संकेत करता है।

भरत के उपरान्त बाणभट्ट ने हर्षचरित के आरम्भ में लिखा है कि उदीच्य लोग श्लिष्ट भाषा को पसन्द करते हैं जब कि प्रतीच्य लोग साज सज्जा के बिना केवल अर्थ मात्र के उपासक हैं। दक्षिणात्य कवियों ने उत्प्रेक्षा को माननीय स्थान दिया जब कि गौड़ कवियों ने केवल वर्णों के आडम्बर को

१— भारतीय साहित्य शास्त्र बलदेव उपाध्याय दूसरा भाग।

२— भारतीय साहित्य शास्त्र दूसरा भाग पृ० १३४।